दो०-बातन्ह मनहि रिझाइ सठ जनि घालसि कुल खीस।
राम बिरोध न उबरसि सरन बिष्नु अज ईस।। 56(क)।।
की तजि मान अनुज इव प्रभु पद पंकज भृंग।
होहि कि राम सरानल खल कुल सहित पतंग।।56(ख)।।

सुनत सभय मन मुख मुसुकाई। कहत दसानन सबहि सुनाई।।
भूमि परा कर गहत अकासा। लघु तापस कर बाग बिलासा।।
कह सुक नाथ सत्य सब बानी। समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी।।
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा। नाथ राम सन तजहु बिरोधा।।
अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ।।
मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही। उर अपराध न एकउ धरिही।।
जनकसुता रघुनाथहि दीजे। एतना कहा मोर प्रभु कीजै।।
जब तेहिं कहा देन बैदेही। चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही।।
नाइ चरन सिरू चला सो तहाँ। कृपासिंधु रघुनायक जहाँ।।
करि प्रनामु निज कथा सुनाई। राम कृपाँ आपनि गति पाई।।
रिषि अगस्ति कीं साप भवानी। राछस भयउ रहा मुनि ग्यानी।।
बंदि राम पद बारहिं बारा। मुनि निज आश्रम कहुँ पगु धारा।।

दो०-बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति।। 57।।

लछिमन बान सरासन आनू। सोषौं बारिधि बिसिख कृसानू।।
सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुंदर नीती।।
ममता रत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी।।
क्रोधिहि सम कामिहि हरि कथा। ऊसर बीज बएँ फल जथा।।
अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा। यह मत लछिमन के मन भावा।।
संधानेउ प्रभु बिसिख कराला। उठी उदधि उर अंतर ज्वाला।।
मकर उरग झष गन अकुलाने। जरत जंतु जलनिधि जब जाने।।
कनक थार भरि मनि गन नाना। बिप्र रूप आयउ तजि माना।।

दो०-काटेहिं पइ कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु डाटेहिं पइ नव नीच।। 58।।

सभय सिंधु गहि पद प्रभु केरे। छमहु नाथ सब अवगुन मेरे।।
गगन समीर अनल जल धरनी। इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी।।
तव प्रेरित मायाँ उपजाए। सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाए।।
प्रभु आयसु जेहि कहँ जस अहई। सो तेहि भाँति रहें सुख लहई।।

जीते जी रक्तदान मरणोपरान्त नेत्रदान